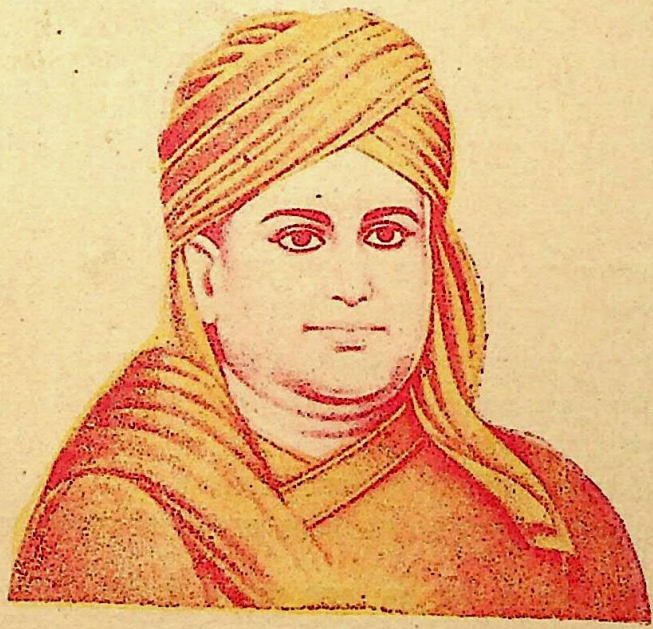


३२२

ओ३म्
कृष्णन्तो विश्वमार्यम्
त्यार्थ प्रकाश शताब्दी पर सादर भेंट—

सत्यार्थ प्रकाश दिग्दर्शन



(सत्यार्थ प्रकाश के प्रणेता महर्षि दयानन्द सरस्वती)

लेखक:—यज्ञपाल आर्यबन्धु

प्रकाशक:—आर्यसमाज, रेलवे हरथला कालोनी, मुरादाबाद

द्वितीय संस्करण

अक्तूबर १९५१

मूल्य नहीं सहयोग दीजिये:—

आर्य समाज रेलवे हरथला कालोनी अपने प्रकाशनों का मूल्य नहीं लेता अपितु निःशुल्क भेंट करता है। पर वह चाहता है कि उसका यह साहित्य प्रचार-यज्ञ अनवरत रूप से चलता रहे। अतः हम आप से साहित्य का मूल्य नहीं आगामी प्रकाशनों के लिए सात्त्विक सहयोग मांगते हैं। साहित्य की भेंट करना यदि हमारा कर्त्तव्य है तो उसके प्रकाशन की व्यवस्था में सहयोग देना आप का कर्त्तव्य है। आइये! हम दोनों अपना-अपना कर्त्तव्य निभाते चलें। याद रखें! समाज का सौभाग्य बढ़ाना अकेले का काम नहीं किन्तु हम सब का पुनीत कर्त्तव्य है।

हमारे सहयोगी—

प्रस्तुत पुस्तक के प्रकाशन में निम्न महानुभावों ने निम्न राशि दान दे कर प्रचार यज्ञ में सहयोग दिया। धन्यवाद।

श्री हरिवंश लाल कुमार, प्रधान, आर्य समाज हरथला	२५०)
श्रीमति राम कीर्ति देवी, (पति स्वर्गीय श्री राम देव जी वैद्य की पुण्य स्मृति में)	१०१)
श्री यशपाल आर्यबन्धु, चन्द्रनगर मुरादाबाद	११)
श्री अरविन्द बुक्स एवं जरनल स्टोर, कपूर कम्पनी मुरादाबाद	११)

नोट:—कम से कम दस रुपये सहयोग में देने वालों का नाम कृतज्ञता पूर्वक प्रकाशित किया जायेगा।

सहयोगीकांक्षी—

हरिवंश लाल कुमार
प्रधान

महावीर सिंह
मन्त्री

रामाश्रय लाल
कोषाध्यक्ष

आर्य समाज रेलवे हरथला कालोनी मुरादाबाद ।

प्रकाशकीय वक्तव्य

महर्षि दयानन्द के अमर ग्रन्थ सत्यार्थ प्रकाश का परिचयात्मक ज्ञान कराने के लिये जो ग्रन्थ लिखे गये हैं, उनमें श्री यशपाल आर्यबन्धु द्वारा लिखित “सत्यार्थ प्रकाश दिग्दर्शन” का विशिष्ट स्थान है। इसका प्रथम संस्करण आर्यसमाज मुरादाबाद की स्थापना शताब्दी के अवसर पर अक्टूबर सन् १९७६ में प्रकाशित हुआ था। तब उसका समस्त व्यय श्री आर्यबन्धु जी ने ही वहन किया था। अपनी लोकप्रियता के कारण उसका प्रथम संस्करण हाथों-हाथ उठ गया और फिर भी उसकी माँग बराबर बनी हुई है। कई आर्य विद्वानों द्वारा इसके व्यापक प्रचार के सुझाव भी आते रहे हैं। अतः आर्यसमाज रेलवे हरथला कालोनी ने प्रस्तुत पुस्तक को पुनः दो हजार प्रतियों में मुद्रण करने का निश्चय किया और इसके लिए सत्यार्थ प्रकाश लेखन शताब्दी समारोह, उदयपुर-८१ उचित अवसर समझा। आर्यसमाज रेलवे हरथला कालोनी अपनी साहित्य प्रकाशन की परम्परा को निभाते हुए सत्यार्थ प्रकाश शताब्दी समारोह के पुनीत अवसर पर “सत्यार्थ प्रकाश दिग्दर्शन” का द्वितीय संस्करण आर्य जगत को समर्पित कर रहा है। आशा है सत्यार्थ प्रकाश दिग्दर्शन महर्षि के अनुपम ज्ञान भण्डार सत्यार्थ प्रकाश के स्वाध्याय की रुचि जन सामान्य में जगाने में सहायक सिद्ध होगा। हमारी इच्छा है कि महर्षि के इस ग्रन्थ का संसार भर में व्यापक प्रचार हो, इसी के लिए हमारा और श्री आर्यबन्धु जी का यह छोटा सा प्रयास है।

सम्पर्क :—

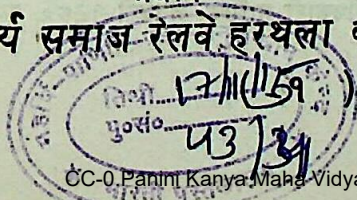
हरिवंश लाल कुमार

महावीर सिंह

प्रधान

मन्त्री

आर्य समाज रेलवे हरथला कालोनी, मुरादाबाद



कौन क्या कहता है ?

डा० स्वामी सत्य प्रकाश जो सरस्वती, प्रयाग

ऋषि के अमर सत्यार्थ प्रकाश का परिचय कराने वाली पुस्तिका "सत्यार्थ प्रकाश दिग्दर्शन" का व्यापक प्रचार होना चाहिए ।

डा० शिवपूजन सिंह कुशवाहा, कानपुर

पुस्तक मिली । धन्यवाद । पुस्तक बहुत उपयोगी है । आपने यह पुस्तक लिख कर श्लाघनीय कार्य किया है । पुस्तक का घर-घर प्रचार होना चाहिए ।

डा० भवानी लाल 'भारतीय'

सत्यार्थ प्रकाश लेखन शताब्दी के उपलक्ष में ऋषि दयानन्द के इस महान् ग्रन्थ का परिचय कराते हुए अनेक ग्रन्थ प्रकाशित हुए हैं । श्री यशपाल आर्यवन्धु, आर्यसमाज के विचारशील, प्रबुद्ध एवं स्वाध्यायशील लेखक हैं । आलोच्य पुस्तक में सत्यार्थ प्रकाश रचना की पृष्ठभूमि, ग्रंथ लेखन में लेखक का उद्देश्य, खण्डन-मण्डन का औचित्य, ग्रंथ लेखन की शैली, ग्रंथ का महत्व, प्रभाव आदि विभिन्न उपयोगी शीर्षकों के अन्तर्गत विषय का सांगोपांग विवेचन किया गया है । सत्यार्थ प्रकाश की आवश्यक जानकारी की दृष्टि से लिखी गई यह पुस्तक व्यापक प्रचार की अपेक्षा रखती है ।

(परोपकारी मासिक, जनवरी १९८०. पृष्ठ २२)

—: आमुख :—

धरती के अविद्या-तम को हरने के लिए महर्षि दयानन्द सरस्वती ने सत्यार्थ प्रकाश रूपी जो ज्ञानदीप संसार को दिया था, उसको आलोकित रखने का उत्तरदायित्व भी आर्यसमाज पर है। उसकी रक्षा और प्रचार-प्रसार का उत्तरदायित्व भी आर्यसमाज पर ही है। महर्षि का अपना कथन है कि—“मेरे शिष्य सभी आर्यसमाजिक हैं, वे ही मेरे विश्वास और भरोसे के भव्य भवन हैं। उन्हीं के पुरुषार्थ पर मेरे कार्यों की पूर्ति और मनोरथों की सफलता अवलम्बित है।” गत एक शताब्दी से आर्यसमाज इस ज्ञानलोक को दिग्दिगन्त तक फैलाने के लिए प्रयत्नशील भी है। विभिन्न आर्य संस्थाओं द्वारा इसके प्रचार-प्रसार के लिए विभिन्न प्रभावशाली योजनायें बनाई जाती रही हैं। और अब भी बन रही हैं। सत्यार्थ प्रकाश परीक्षाओं का आयोजन इसी उद्देश्य से किया जाता है कि लोग इसी वहाने सत्यार्थ प्रकाश का स्वाध्याय करेंगे। पर इन परीक्षाओं में वही लोग भाग ले पाते हैं कि जो सत्यार्थ प्रकाश के महत्व को समझते हैं, उसे पढ़ना चाहते हैं एवं जिनका ऐसी संस्थाओं से सम्पर्क भी है कि जो ऐसी परीक्षाओं का आयोजन करती हैं। पर उन लोगों के लिये भी तो कुछ चाहिये कि जो न तो सत्यार्थ प्रकाश के विषय में ही कुछ जानते हैं और न ही उपरोक्त आर्य संस्थाओं के सम्पर्क में ही हैं। सत्यार्थ प्रकाश दिग्दर्शन ऐसे लोगों के लिए ही लिखा गया है। सत्यार्थ प्रकाश का परिचयात्मक ज्ञान कराने वाले कई अन्य भी उपयोगी ग्रन्थ लिखे गये हैं कि जो बड़े भी हैं और बड़े-बड़े विद्वानों द्वारा भी लिखे गये हैं। इस पर भी हमारा विश्वास है कि जैसे एक सुन्दर गुलदस्ते में कि जिसमें गेंदा और

गुलाब आदि के बड़े-बड़े फूल शोभायमान हो रहे होते हैं, वहाँ एक नन्हा सा चमेली का फूल भी स्थान पा ही लेता है, वैसे ही दिग्गज आर्य विद्वानों के बड़े-बड़े एवं महत्वपूर्ण भव्य ग्रन्थों में यह लघु ग्रन्थ भी अपना स्थान बना ही लेगा। हमारी तीव्र उत्कण्ठा है कि सत्यार्थ प्रकाश का प्रचार केवल लाखों प्रतियों के मुद्रण मात्र तक ही सीमित न रहे अपितु यह जन-जन तक पहुँचे और साथ में यह भी कि इसके स्वाध्याय की लालसा लोगों में उत्पन्न हो। अन्यथा ये हमारे घरों की अलमारियों की शोभा मात्र बनकर रह जायेगा। सत्यार्थ प्रकाश के स्वाध्याय की इसी लालसा को जगाने के लिये हमारा यह तुच्छ प्रयत्न है। हम चाहते हैं कि लोग सत्यार्थ प्रकाश को बार-बार पढ़ें। हमारा विश्वास है कि जैसे समुद्र में बार-बार गोता लगाने से हर बार कुछ न कुछ मोती हाथ लगते ही हैं, वैसे इस ज्ञान सागर में डुबकी लगाने से हर बार कुछ न कुछ मिलेगा ही। यह लघु ग्रन्थ किसी एक हृदय में भी सत्यार्थ प्रकाश के स्वाध्याय की तीव्र लालसा उत्पन्न कर सका तो लेखक अपना श्रम सफल समझेगा।

विनीत :

यशपाल आर्यबन्धु

प्रचार मन्त्री

आर्य निवास :

चन्द्र नगर,

मु रा दा वा द

आर्य समाज रेलवे हरथला कालोनी

मुरादाबाद

सत्यार्थ प्रकाश दिग्दर्शन

सत्यार्थ प्रकाश उन्नीसवीं शताब्दी के अद्वितीय विद्वान् महान् समाज सुधारक तथा धर्म सशोधक महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती की एक अनुपम कृति है। यह ग्रन्थ दो भागों में विभक्त है। प्रथम भाग मण्डनात्मक है, जिसमें दस समुल्लास हैं तथा दूसरा भाग खण्डनात्मक है जिसमें चार समुल्लास (अध्याय) हैं। प्रथम भाग में महर्षि ने अपने वेद-प्रतिपादित मन्तव्यों की व्याख्या की है। प्रथम समुल्लास में ईश्वर के सौ नामों की व्याख्या की गई है। द्वितीय समुल्लास में सन्तानों की शिक्षा, भूतप्रेतादि निषेध तथा जन्मपत्र आदि की समीक्षा की गई है। तृतीय समुल्लास में पठन-पाठन व्यवस्था, ब्रह्मचर्य तथा संध्या-हवन आदि कर्तव्यों का निर्देश दिया गया है। चतुर्थ समुल्लास में विवाह तथा गृहस्थाश्रम के व्यवहार की शिक्षा दी गई है। पंचम समुल्लास में वानप्रस्थ और सन्यास की विधि का उल्लेख किया है। छठे समुल्लास में राजधर्म की चर्चा मिलती है। सप्तम समुल्लास में ईश्वर तथा वेद के विषय पर और जीव के कर्मस्वातन्त्र्य पर विचार किया गया है। आठवें समुल्लास में जगत की उत्पत्ति, स्थिति और प्रलय आदि का वर्णन किया गया है। नवें समुल्लास में विद्या-अविद्या तथा बन्ध-मोक्ष की समीक्षा की गई है। दसवें समुल्लास में आचार-अनाचार तथा भक्ष्याभक्ष्य विषय वर्णित है। ग्रन्थ का उत्तरार्द्ध जो खण्डनात्मक माना जाता है चार समुल्लासों में विभक्त है। एकादश समुल्लास में आर्यावर्तीय आस्तिक मतों की समीक्षा की गई। द्वादश समुल्लास में चार्वाक, बौद्ध और

जन मत की समीक्षा है। लेखकों समुल्लास में ईसाई मत की समीक्षा की गई है। और चौदहवें समुल्लास में इस्लाम की समीक्षा की गई है। ग्रन्थ के प्रारम्भ में महर्षि ने एक भूमिका लिखी है जिसमें इस ग्रन्थ के बनाने का प्रयोजन, आशय एवं अभिप्राय का वर्णन किया गया है। अन्तिम चार समुल्लासों के पूर्व प्रत्येक की एक अनुभूमिका लिखी गई है, जिसमें उस-उस मत की समीक्षा विषयक अपने पक्षपात रहित दृष्टिकोण की व्याख्या की गई है और ग्रन्थ के अन्त में महर्षि ने अपने मान्य मन्तव्यों को, जिन्हें धर्म के मूलभूत सिद्धान्त माना जाता है, व्याख्या की है।

अपूर्व नाम—

महर्षि दयानन्द सरस्वती ने अपने इस अमर ग्रन्थ का नाम “सत्यार्थ प्रकाश” रखा है। यह एक सर्वथा अपूर्व नाम है। इससे पूर्व किसी भी ग्रन्थ का ऐसा नाम नहीं मिलता। वेद सभी सत्य विद्याओं का पुस्तक है अतः सत्य का प्रकाश वेद में किया गया है। किन्तु अज्ञ लोगों ने वेद के सही अर्थों को न समझकर अर्थ का अनर्थ कर दिया एगं वेदों को भांड, धूर्त और निशाचरों की कृति बताने लगे। महर्षि दयानन्द सरस्वती ने संसार को बताया कि वेद निश्चय ही सत्य विद्याओं की पुस्तक है, वेद, भांड, धूर्त एवं निशाचरों की कृति नहीं किन्तु वेदार्थ के नाम पर अनर्थकारी टीकायें करने वाले भाष्यकार ही भांड, धूर्त एवं निशाचरों हैं। अतः सत्यार्थ प्रकाश में महर्षि ने सत्य अर्थों का प्रकाश किया है अतः इसीलिए इस ग्रन्थ का नाम भी सत्यार्थ प्रकाश रखा है। इससे महर्षि दयानन्द की लोकेषणा से पूर्ण विरक्ति की अनूठी झलक भी मिलती है। अन्यथा इस ग्रन्थ का नाम वे ‘दयानन्द प्रकाश’ आदि भी रख सकते थे।

ग्रन्थ रचना की पृष्ठभूमि—

महर्षि दयानन्द संसार में लुप्तप्रायः वेद-विद्या के प्रचार-प्रसार की दोक्षा लेकर कार्यक्षेत्र में अवतीर्ण हुए थे। अतः अपने इस कार्य को गति देने के लिये एक संगठन बनाने की सोच रहे थे, जो उनके कार्य को नियमित रूप से आगे बढ़ाने में सक्षम हो सके। प्रत्येक समाज अथवा संगठन के लिये किसी न किसी आधारभूत ग्रन्थ की आवश्यकता होती है, जिसमें उसके आदर्श, मन्तव्य, सिद्धांत एवं उद्देश्यादि की व्याख्या की गई हो। यद्यपि आर्यसमाज की आधार पुस्तक वेद ही है तथापि प्रत्येक की उन तक पहुँच न होने से ऐसे ग्रन्थ की आवश्यकता थी जो सर्वसाधारण की समझ में आ सके। और जिसके स्वाध्याय से प्रत्येक व्यक्ति, आय समाज में प्रविष्ट होते ही जान सके कि उसके मान्य कौन-कौन से सिद्धान्त हैं। यही मुख्य रूप से सत्यार्थ प्रकाश की रचना की पृष्ठभूमि है।

ग्रन्थ रचना के प्रेरक—

जिस समय पाखण्ड, असत्य और अविद्या के विरुद्ध सर्वतो-मुखी क्रान्ति का संदेशा लेकर क्रांतिदूत दयानन्द भारतभूमि पर आये थे तब उनके जागृतिघोष ने शताब्दियों से अज्ञान, अविद्या और अन्धकार की गहरी नींद में सोई आय (हिन्दू) जाति को झकझोर कर रख दिया। तब सर्वत्र एक अपूर्व हलचल सी मच गई। प्रभात-वेला में जगाने से जैसे कुछ बालक शीघ्र उद्बुद्ध हो जाते हैं और कुछेक प्रमाद-प्रिय बालक ऐसे भी होते हैं जो जगाने वाले का विरोध कर हठात् सोये रहने का उपक्रम करते हैं, ऐसे ही जागृति-प्रिय लोगों ने महर्षि दयानन्द के जागृति-घोष को ध्यानपूर्वक सुना और सचेत हो गये जबकि प्रमाद-प्रिय लोगों ने उसका घोर विरोध किया। ऐसे उद्बुद्ध लोगों में

मुरादाबाद के राजा जयकृष्णदास सी० एस० आई० प्रमुख थे। उन्होंने महर्षि को सुझाव दिया कि भाषणों का प्रभाव प्रायः अस्थायी हुआ करता है एवं सभी स्थानों के लोग उसे एक साथ सुन भी नहीं सकते अतः आप अपने सिद्धान्तों एवं मन्तव्यों का प्रतिपादक एक ऐसा ग्रन्थ लिख दें जिसके अध्ययन से सामान्य लोग आपके मन्तव्यों एवं सिद्धान्तों को भली प्रकार समझ सकें। इतना ही नहीं राजा जयकृष्णदास ने इस पुनीत कार्य के लिये सभी प्रकार का सहयोग देने का भी आश्वासन दिया और इस कार्य के लिए एक महाराष्ट्रीय लेखक पं० चन्द्र शेखर की सेवायें महर्षि दयानन्द को उपलब्ध करा दीं। सत्यार्थ प्रकाश के प्रथम संस्करण का व्यय भी उन्होंने वहन किया। इसका प्रथम संस्करण १२ जून सन् १८७४ को लिखा जाना प्रारम्भ होकर सितम्बर सन् १८७४ में समाप्त हुआ। ३० जून तक लेखन कार्य काशी में होता रहा पश्चात् प्रथम जुलाई को महर्षि प्रयाग चले गये और वहाँ तीन मास रहकर सत्यार्थ प्रकाश लिखवाया। इस ग्रन्थ का मद्रण बनारस में स्टार प्रेस में मुन्शी हरवंश लाल के प्रबन्ध में हुआ और इस प्रकार यह ग्रन्थ सन् १८७५ ई० में प्रथम बार प्रकाश में आया। प्रथम संस्करण में केवल १२ समुल्लास ही प्रकाशित हो पाये थे, तथा उसमें महर्षि के सिद्धान्त-विद्वद् मृतक श्राद्ध तथा मांस भक्षण जैसे अवैदिक मन्तव्य, लेखकों की धूर्तता से समाविष्ट हो गये थे। जिस कारण महर्षि को यह ग्रन्थ पूर्णरूपेण शोधना पड़ा। इसमें महर्षि ने न केवल अवैदिक मन्तव्यों को ही हटाया वरन् इसकी भाषा भी व्याकरण आदि के अनुसार शोध कर बनाई। सन् १८८१ ई० में उदयपुर में महर्षि ने इस ग्रन्थ को स्वयं शोधा एवं उसकी भूमिका लिखी। किन्तु उनके जीवनकाल में यह ग्रन्थ छप न सका और उनके देहावसान के पश्चात् सन् १८८४ ई० में प्रकाशित हो सका।

सत्यार्थ प्रकाश रचना का उद्देश्य—

सत्यार्थ प्रकाश रचना का उद्देश्य उसके लेखक के शब्दों में इस प्रकार है “मेरा इस ग्रन्थ के बनाने का मुख्य प्रयोजन सत्यासत्य अर्थ का प्रकाश करना है अर्थात् जो सत्य है उसको सत्य और जो मिथ्या है उसको मिथ्या ही प्रतिपादन करना सत्य अर्थ का प्रकाश समझा है।” साथ में यह भी कि “सब मतमतान्तरों की गुप्त व प्रकट बुरी बातों का प्रकाश कर विद्वान्-अविद्वान् सब साधारण मनुष्यों के सामने रखा है कि जिससे सबसे सबका विचार होकर परस्पर प्रेमी होकर एक सत्य मतस्थ हों।”

महर्षि की मान्यता है कि “विद्वान् आप्तों का यही मुख्य काम है कि उपदेश या लेख द्वारा सब मनुष्यों के सामने सत्यासत्य का स्वरूप समर्पित कर दें, पश्चात् स्वयं अपना हिताहित समझ कर सत्यार्थ का ग्रहण और मिथ्यार्थ का परित्याग करके सदा आनन्द में रहें।” अतः स्पष्ट है कि महर्षि दयानन्द का इस पवित्र ग्रन्थ की रचना का मुख्य प्रयोजन सत्यासत्य का निणय करा मानवमात्र की उन्नति करना था। इसी उद्देश्य से प्रेरित होकर ही उन्होंने अन्य मतमतान्तरों की निष्पक्ष समालोचना की है।

सत्यार्थ प्रकाश में खण्डन-मण्डन —

सत्यार्थ प्रकाश में अन्य मतों की समीक्षा को देखकर प्रायः लोग आक्षेप किया करते हैं कि महर्षि ने अपने ग्रन्थ में अन्य मतों की समालोचना क्यों की? उन्हें केवल अपने मन्तव्यों का प्रतिपादन ही करना चाहिए था, व्यर्थ के आक्षेप नहीं। किन्तु ऐसा कहने वाले महर्षि के आशय को समझ ही नहीं पाये। उन्होंने किसी का मन दुखाने के लिये खण्डन नहीं किया अपितु असत्य

के निराकरण एवं सत्य के प्रतिपादन हेतु ही जहाँ आवश्यक समझा वहीं खण्डन का सहारा लिया है। एक कुशल शल्य-चिकित्सक इस तथ्य से भलीभाँति परिचित होता है कि किसी ब्रण (घाव) की सफलतम चिकित्सा के लिये केवल एक अच्छी मरहम का होना ही पर्याप्त नहीं। उस घाव को सर्वथा पीप-पस रहित कर साफ-स्वच्छ करना परम आवश्यक होता है। इसी प्रकार महर्षि दयानन्द भी यह मानकर चले थे कि धर्म-संस्थापन के लिए केवल सत्य का प्रतिपादन ही नहीं, असत्य का निराकरण भी आवश्यक है। वे विद्या की वृद्धि से हा सन्तुष्ट नहीं होते अविद्या का नाश भी आवश्यक समझते हैं, सत्य के ग्रहण करने में ही सन्तोष नहीं करते, असत्य को त्यागना भी आवश्यक समझते हैं। हम डा० भवानी लाल भारतीय के इस मत से पूर्ण-तया सहमत हैं कि किसी भी “धर्म संशोधक के लिए खण्डन-मण्डन का कार्य, चाहे वह कितना ही अप्रिय क्यों न हो, अवश्य-मेव करणीय होता है।” (विश्वधर्म कोष पृष्ठ १५) महर्षि ने विदेशीय मतमतान्तरों की ही आलोचना नहीं की, एतद्देशीय मतमतान्तरों की भी समालोचना की है। इस सम्बन्ध में महर्षि स्वयं लिखते हैं—“यद्यपि मैं आर्यावर्त देश में उत्पन्न हुआ और बसता हूँ तथापि जैसे इस देश के मत-मतान्तरों की झूठी बातों का पक्षपात न कर यथा-तथ्य प्रकाश करता हूँ, वैसे ही दूसरे देशस्थ वा मत वालों के साथ भी वर्तता हूँ।” महर्षि ने अन्त के चार खण्डनात्मक समुल्लासों के प्रारम्भ में पृथक-पृथक अनुभूमिकायें लिखकर उन-उन मतों की समीक्षा के विषय में अपने दृष्टिकोण तथा सौहार्द को सुस्पष्ट कर दिया है। वस्तुतः इन मतों की आलोचना में निहित महर्षि की सदाशयता और पक्ष-पात शून्यता उनके निम्न कथन में परिलक्षित होती हैं। वे लिखते

है कि मेरे इस कर्म से यदि उपकार न मानें, तो विरोध भी न करें। क्योंकि मेरा तात्पर्य किसी को हानि या विरोध करने में नहीं, किन्तु सत्यासत्य का निर्णय करने-कराने का है।” दुःख है महर्षि की इस स्पष्टोक्ति के रहते हुए भी सत्यार्थ प्रकाश में की गई आलोचना के आशय को लोग क्यों नहीं समझ पाते। डा० भवानी लाल भारतीय ठीक ही लिखते हैं कि “सत्याथ प्रकाश में अन्य मत मतमतान्तरों की जो तथ्याश्रित आलोचना की गई है उसके प्रयोजन को समझने में बहुतों से भूल हुई है। सामान्य पाठक की तो बात ही क्या, महात्मा गांधी जैसे विचारशील महापुरुष भी सत्यार्थ प्रकाश के खण्डनात्मक अंश में लेखक की सदाशयता को नहीं समझ पाये और इसे निराशाजनक पुस्तक कह बैठे। मतांध तथा साम्प्रदायिक भावापन्न पण्डे - पुजारी, महन्त, मुल्ला-मौलवी तथा पादरियों ने अपने संकुचित स्वार्थों पर आघात लगने के भय से सत्यार्थ प्रकाश जैसे ज्ञानलोक के प्रसाक चण्डांशु पर सदा ही निंदा और कुत्सा रूपी पंक उछालने का प्रयास किया है।” (विश्वधर्मकोश पृष्ठ २३-२४)

खण्डन या विचार स्वातंत्र्य—

महर्षि दयानन्द सरस्वती की जिस सदाशयता भरी भावना को लोग खण्डन-मण्डन के नाम पर कलंकित करने का दुःसाहस करते हैं उसी को कुछ निष्पक्ष उदारमना महानुभावों ने खूब सराहा भी है। इस सम्बन्ध में मौ० जहूर बख्श हिन्दी कवि के विचार उल्लेखनीय हैं। वे लिखते हैं—“कुछ लोग महर्षि के जिस गुण और उसके विकास को दोष समझते हैं, उसे ही मैं एक बड़ा आवश्यक गुण समझता हूँ। बालक मूलशंकर की शिवरात्रि सम्बन्धी घटना से लेकर ऋषि दयानन्द पर पुराण, कुरान,

वाइवल अदि की खलन अलोचना लक सोन विचार स्वातन्त्र्य को अन्य धर्मों की ओर घृणात्मक दृष्टि का लाँछन लगाते हैं, परन्तु उन्होंने कब और कहाँ अन्य धर्मों पर घृणात्मक दृष्टि की है, मुझे तो इसका पता नहीं चलता। उन्होंने यह तो कहीं नहीं लिखा कि अमुक मत बुरा और घृणा के योग्य है इसलिए इस मत के अनुयायी उसे मानना छोड़ दें। उन्होंने सत्यार्थ प्रकाश में अन्य मतसम्बन्धी ग्रन्थों की जो आलोचना की है वह उनके विचार स्वातन्त्र्य का सुन्दर उदाहरण है। स्मरण रखना चाहिए कि विचार स्वातन्त्र्य कोई भयंकर वस्तु नहीं, इससे संसार में युगान्तर उपस्थित होता है। वही संसार को उत्थान के शिखर पर ले जाता है। विचार स्वातन्त्र्य से घबराना कोरी कायरता है।” (सत्यार्थ प्रकाश आन्दोलन का इतिहास, पृष्ठ ५६-६०) वस्तुतः “ऋषि दयानन्द का खण्डन किसी मत विशेष के प्रति विरोध का सूचक न होकर अज्ञान, अधर्म और असत्य की समाप्ति के लिए था।” (भूमिका स. प्र. का महत्व, पं. विहारी लाल शास्त्री कृत)

खण्डन-मण्डन एक ही व्यक्ति के दो हाथ—

यदि निष्पक्ष भाव से देखा जाये तो विदित होगा कि सत्यार्थ प्रकाश में खण्डन-मण्डन एक ही व्यक्ति के दो हाथों के सदृश्य हैं, जो कि एक हाथ में कड़वी औषधि लिए है तो दूसरे हाथ में स्वास्थ्य वर्द्धक पथ्य। खण्डन यदि औषधि रूप है तो मण्डन पथ्य रूप। “कड़वी औषध विन पिये मिटे न तन का ताप” के अनुसार रोग को दूर करने के लिए औषध की आवश्यकता हुआ करती है। परन्तु औषध तभी कारगर होता है जब उसके साथ पथ्य का भी सेवन किया जाए। यदि गम्भीरतापूर्वक

विचार किया जाये तो यही तथ्य प्रमाणित होगा कि अविद्या रूपी रोग को दूर करने के लिए खण्डन यदि औषधरूप है तो मण्डन पथ्यरूप । इन दोनों के समुचित प्रयोग के बिना अविद्या का महाभयंकर रोग तीन काल में भी दूर नहीं हो सकता । विद्वद्वर पं० आत्माराम जी क्या सुन्दर लिखते हैं -“सत्यार्थ प्रकाश उस व्यक्ति के समान है जो एक हाथ में औषधि की बोतल और दूसरे हाथ में रोगी के लिए आरोग्यदायक भोजन लिए खड़ा है । यदि उत्तरार्द्ध औषधि है तो पूर्वार्द्ध आरोग्यदायक भोजन है । यदि उत्तरार्द्ध मतमतान्तरों के रोगों का खण्डन करता है तो पूर्वार्द्ध वेद स्वास्थ्य का मण्डन कर रहा है ।

कुछ लोग यह कहा करते हैं कि किसी का खण्डन नहीं करना चाहिए, केवल अपना मण्डन करना चाहिए । लोग स्वयं ही लाभ-हानि को सोच लेंगे, हम काहे को किसी का मन दुखायें । यह कथन किसी भी अवस्था में ठीक नहीं ठहरता, हम मानते हैं कि जागते हुए पुरुष को मण्डन की आवश्यकता होती है परन्तु सोए हुए को जिसकी आँखें नहीं देख सकती, पहले जगाने की आवश्यकता है.....डाक्टर या वैद्य यदि रोगी को चिरायता, कुनीन कड़वी औषधि देता है इस अभिप्राय से कि उसको संहारक ज्वर से छुटकारा मिले तो रोगी का कभी-कभी के कड़वेपन को अनुभव करते हुए मुँह बनाना या डाक्टर को गाली निकालना, कभी डाक्टर को अपने शुभ कार्य के छोड़ने की प्रेरणा नहीं दे सकता ।” पं० लेखराम कृत महर्षि जीवन चरित्र, पृष्ठ १००३)

सत्यार्थ प्रकाश की लेखन शैली—

Style is the man himself के अनुसार शैली लेखक के व्यक्तित्व की प्रकाशिका होती है । किसी लेखक की रचना

या कृति के पढ़कर उसके व्यक्तित्व का सहज ही अनुमान लगाया जा सकता है। वैसे शैली पर विषय और व्यक्ति दोनों का ही प्रभाव पड़ता है। इसीलिए शैली कभी विषय प्रधान और कभी व्यक्ति प्रधान हो उठती है। फिर भी शैली विषय से चाहे कितनी ही प्रभावित क्यों न हो उस पर लेखक के व्यक्तित्व का प्रभाव पड़े बिना नहीं रहता। अपितु यूँ कहना चाहिए कि उसका व्यक्तित्व स्वयं को प्रकट करता हुआ एक प्रकार से गरजता हुआ सा चलता है।

महर्षि दयानन्द वैचारिक क्रांति के अग्रदूत थे और सत्यार्थ प्रकाश उनके विचारों का पुंज। यह उनकी दार्शनिक अभिव्यक्ति तथा ज्ञानकोष है। इसी कारण यह ग्रन्थ भी वैचारिक क्रांति का अग्रदूत ही माना जाता है। वैचारिक क्रांति के अग्रदूत इस ग्रन्थ की भाषा शैली भी मुख्यरूप से विचारात्मक ही है। बौद्धिक विवेचना की प्रधानता ही विचारात्मक शैली की मुख्य विशेषता मानी जाती है। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल के अनुसार “विचारात्मक शैली का परम उत्कर्ष यही कहा जा सकता है जहाँ प्रत्येक पैरा-ग्राफ में विचार दबा-दबा कर ठूँसे गये हों।” यदि विचारपूर्वक देखा जाय तो पता चलता है कि सत्यार्थ प्रकाश पर उक्त बात पूर्णरूपेण सही बैठती है। सम्पूर्ण सत्यार्थ प्रकाश बौद्धिक विवेचना से भरा पड़ा है। विचारों का तो यह अथाह सागर ही है। चिंतन के लिए जितनी सामग्री यह ग्रन्थ प्रस्तुत करता है, उतनी संसार का स्यात् ही कोई अन्य ग्रन्थ करता हो।

तर्कप्रधान शैली—

महर्षि दयानन्द प्राचीन वैदिक धर्म के ही आचार्य थे। उसी के पुनरुद्धारक तथा संस्थापक थे। वैदिक धर्म एक युक्तियुक्त तर्क-

प्रधान धर्म है। अतः वैदिक धर्म के किसी आचार्य अथवा संस्थापक के लिये तर्क का आश्रय लेना अथवा तर्क प्रधान लिखना स्वाभाविक हो है। महर्षि अपने युग के महान् तार्किक विद्वान् थे। महर्षि के तर्क के सम्मुख बड़े-बड़े तार्किकों की जिह्वा पर ताला लग जाया करता था। जैसा कि पूर्व लिखा जा चुका है—एक तार्किक आचार्य की यह सम्पूर्ण रचना तर्क-प्रधान शली ही लिये हुए है। स्वामी वेदानन्द जी के अनुसार “महर्षि दयानन्द सब मतवादियों को कहना चाहते हैं कि जब संसार-व्यवहार में पदे-पदे आप तर्क का प्रयोग करते हैं तो धर्म-व्यवहार में तर्क का क्यों त्याग करते हो !” (सत्यार्थ प्रकाश का प्रभाव, पृष्ठ ७७)।

वस्तुतः धर्म में तर्कबुद्धि का प्रयोग विश्व को आर्य समाज के यशस्वी संस्थापक महर्षि दयानन्द की ही देन है। तर्क की कसौटी पर कसने के लिए ही महर्षि दयानन्द ने अन्य मतमतान्तरों की सत्यार्थ प्रकाश में आलोचना की है। और सत्य तो यह है कि आलोचना का आश्रय ले महर्षि ने मतवादियों के मनोमन्दिरों में प्रसुप्त तर्क ऋषि को जगाने का सुन्दर प्रयास ही किया है।

कोई-कोई महर्षि की भाषा को लकड़तोड़ भाषा कहते हैं, किन्तु हमारी दृष्टि में ऐसा कहना यथार्थ नहीं। यह हो सकता है कि कहीं-कहीं महर्षि दयानन्द की भाषा कुछ कठोर हो गई हो किन्तु ऐसा सर्वत्र नहीं है। कहीं-कहीं तो उनकी भाषा इतनी कारुणिक तथा मार्मिक हो गई है कि पढ़ने वाला स्वयं भी द्रवित हो उठता है। महर्षि ने अपनी भाषा में व्यंग का भी भरपूर सहारा लिया है। किन्तु जैसा कि डा० लक्ष्मी नारायण गुप्त का कथन है “उनके हास्य और व्यंग में शिष्टता है। वह किसी को चिढ़ाने

के उद्देश्य से नहीं अपितु अशिक्षित एवं अविद्याग्रस्त जनता को शिक्षित बनाने के उद्देश्य से लिखा गया है।” (हिन्दी भाषा और साहित्य को आर्य समाज की देन, पृष्ठ १०४) जो भी हो यदि स्वामी दयानन्द की लेखनी में तीक्ष्णता का प्राबल्य न होता तो भारतवर्ष की तत्कालीन परिस्थिति में जनसाधारण पर उसका वैसा प्रभाव भी न पड़ता। वस्तुतः चिरकाल से व्याप्त अज्ञान, अन्धविश्वास एवं मूढ़ता की गहरी जड़ को काटने के लिए वज्रतुल्य लेखनी अनिवार्य ही थी।

सत्यार्थ प्रकाश के प्रमुख सिद्धांत—

सत्यार्थ प्रकाश महर्षि दयानन्द और आर्यसमाज के सिद्धांतों का प्रतिपादक ग्रन्थ है। वैसे तो इसके प्रकरण-प्रकरण में महर्षि ने वेद-प्रतिपादक अपने सिद्धांतों का वर्णन किया ही है किन्तु ग्रन्थांत में ५१ मन्त्रव्यों में अपने सिद्धान्तों का सुस्पष्ट भाषा में परिभाषित भी कर दिया है, जिससे कि कोई शङ्का न रहे। इसके अनुसार वे ईश्वर, जीव और प्रकृति के अनादित्व को स्वीकार करते हैं। अर्थात् यह पदार्थ सदा से हैं और सदा रहेंगे। इन्हीं को नित्य भी कहते हैं। महर्षि की मान्यता है कि जो पदार्थ नित्य होते हैं, उनके गुण, कर्म, स्वभाव भी नित्य ही हुआ करते हैं। ईश्वर सच्चिदानन्द आदि लक्षणयुक्त है, जिसके गुण, कर्म, स्वभाव नित्य पवित्र हैं। वह सर्वज्ञ, निराकार, सर्वव्यापक, अजन्मा, अनन्त, सर्वशक्तिमान्, दयालु, न्यायकारी, सर्व सृष्टि का कर्त्ता, धर्त्ता, हर्त्ता और सब जीवों को कर्मानुसार सत्य न्याय से फल देने वाला हैं। वेद संहितायें उसका निष्प्रान्त स्वतः प्रमाण ज्ञान हैं, जो कि सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है। जीव इच्छा, द्वेष, सुख, दुःख और ज्ञानादि गुणयुक्त अल्पज्ञ तथा अल्प शक्ति वाला

नित्य पदार्थ है। जीव और ईश्वर स्वरूप और वैधर्म्य से भिन्न और व्याप्य व्यापक और साधर्म्य से अभिन्न हैं। ईश्वर और जीव का सम्बन्ध उपास्य-उपासक, व्याप्य-व्यापक और पिता-पुत्र आदि सम है। प्रकृति जड़ है एवं जगत का उपादान कारण है। सृष्टि और प्रलय का चक्र प्रवाह से अनादि है। सृष्टि अपने आप नहीं बन जाती अपितु उसका कर्त्ता परमेश्वर है। जीव का लक्ष्य जन्म-मरण के बन्धन से छूट मोक्ष की प्राप्ति है। सत्यार्थ प्रकाश मुक्ति से पुनरावृत्ति के सिद्धान्त का भी पृष्ठपोषक है। उसका तर्क है कि सीमित कर्मों का फल असीम नहीं हो सकता। यह ग्रन्थ जीव को कर्त्ता और भोक्ता तो मानता ही है, उसे कर्म करने में स्वतन्त्र और फल भोगने में ईश्वर की व्यवस्था के अधीन मानता है। कर्मानुसार ही जीव उत्तम, मध्यम एवं निकृष्ट योनियों को प्राप्त करते हैं। सत्यार्थ प्रकाश जीवों को, जीवों के ज्ञान में असंख्य होते हुए भी परमात्मा के ज्ञान में संख्य मानता है। क्यों कि यदि ईश्वर को गणना में जीव असंख्य हों तो प्रथम तो उसकी सर्वज्ञता में दोष आता है दूसरे जीवों के कर्मफल की व्यवस्था भी नहीं हो सकती। यह ग्रन्थ यह भी मानता है कि जीव ईश्वर का अंश नहीं क्योंकि जो गुण अन्शी में होते हैं, वही अन्श में भी होने चाहियें, किन्तु ऐसा है नहीं, अतः जीव ईश्वर का अंश भी नहीं। साथ ही यह भी कि मुक्ति की अवस्था में जीव का ईश्वर में लय भी नहीं हो जाता अर्थात् जीव का अपना अस्तित्व समाप्त नहीं होता। यह ग्रंथ षड्दर्शनों में अविरोध की बात को भी स्वीकारता है। इसमें वर्णव्यवस्था को गुण, कर्म स्वभाव के अनुसार माना गया है न कि जन्म से। इसमें जन्म से ही किसी को छोटा अथवा बड़ा मानने की कोई व्यवस्था नहीं। यह सद्ग्रन्थ वेद के पढ़ने का अधिकार मनुष्यमात्र को देता है। यही वह प्रथम ग्रंथ है जो धर्म में तर्कबुद्धि के प्रवेश की अनुमति देता है। आचार्य

बैद्यनाथ शास्त्री ठीक लिखते हैं—“धार्मिक विषयों में बुद्धि और तर्क का समावेश वह अनूठा तथ्य है जिसका श्रेय प्रत्यक्षतः सत्यार्थ प्रकाश को प्राप्त है ।” (सत्यार्थ प्रकाश दर्पण, पृष्ठ १४) इस ग्रन्थ में प्रतिपादित सिद्धांत भी सर्वथा तर्कसंगत एवं बुद्धि-सम्मत हैं। पण्डित विहारी लाल जी शास्त्री ठीक ही लिखते हैं—“दयानन्दस्य सिद्धांतः शुद्धास्तर्कसमन्वितः न च खंडयितुं शक्याः मायावाद विमोहितैः” (अंगद चरण, पृष्ठ ११) सत्यार्थ प्रकाश के सिद्धांतों की यह विशेषता है कि ये स्पष्ट सुलझे हुए तथा सर्वथा अकाट्य हैं। सत्यार्थ प्रकाश में प्रतिपादित वैदिक सत्य-सनातन सिद्धांतों की पूर्ण जानकारी के लिए उसका गम्भीर स्वाध्याय परम आवश्यक है। क्योंकि उसको पढ़े बिना केवल इधर-उधर से पढ़-सुन कर उसके सिद्धांतों की गहराई तक पहुंचना सर्वथा असम्भव है।

सत्यार्थ प्रकाश का महत्व—

सत्यार्थ प्रकाश उन्नीसवीं शताब्दी का एक अत्यन्त महत्व-पूर्ण ग्रन्थ है। यह महान ग्रन्थ उस समय लिखा गया था कि जब हिन्दी गद्य का अभी स्वरूप ही निश्चित नहीं हो पाया था। उस समय खड़ी बोली ब्रज भाषा तथा पण्डिताऊ भाषा रूपी पर्वत-शिलाओं से प्रबल संघर्ष करती हुई सरिता के समान अपना मार्ग खोज रही थी। ऐसे समय में गुजराती भाषा-भाषी तथा संस्कृत भाषा का अद्वितीय विद्वान् होते हुए भी महर्षि दयानन्द ने अपने इस ग्रन्थ को हिन्दी भाषा में ही लिखा। इससे महर्षि की दूरदर्शिता का पता चलता है कि वे भारतीय एकता के लिए हिन्दी भाषा को कितना महत्व देते थे। आचार्य पं. रामानन्द शास्त्री ठीक ही लिखते हैं कि “स्वामी दयानन्द ने सत्यार्थ प्रकाश को हिन्दी

में लिखा तथा उसका नाम आर्य भाषा दिया। इससे भारतीय एकता में ऋषि का अनुराग प्रकट होता है। महात्मा गांधी, जवाहर लाल नेहरू, बाल गंगाधर तिलक, योगी अरविन्द आदि महापुरुषों ने यावज्जीवन अंग्रेजी साहित्य की सेवा की जबकि सर्वदा राष्ट्रीयता का दम भरते रहे।" इस ग्रन्थ के साथ हिन्दी भाषा के विकास का गौरवपूर्ण इतिहास जुड़ा है। वस्तुतः प्रथम बार धर्म एवं दर्शन के गूढ़ रहस्यों को जनसाधारण तक उनकी अपनी भाषा में पहुंचाने का सफल प्रयास इसी ग्रन्थ द्वारा ही हो सका अन्यथा अब तक धर्म और दर्शन की अभिव्यक्ति का माध्यम संस्कृत भाषा ही थी, जो जनसाधारण तक अपनी पहुंच प्रायः खो चुकी थी। और सत्य तो यह है कि इस अनूठे ग्रन्थ के स्वाध्याय के लिए लाखों अहिन्दी भाषी व्यक्तियों ने हिन्दी भाषा सीखी। उत्तरी भारत में तो हिन्दी भाषा के विकास में इस ग्रन्थ का अपूर्व हाथ है।

इस ग्रन्थ का महत्व इस लिए भी है कि इसी एक ग्रन्थ के स्वाध्याय मात्र से संसार के प्रायः सभी प्रमुख-प्रमुख मतों एवं उनके मान्य सिद्धांतों का परिचयात्मक ज्ञान हो जाता है। तभी डा० भवानी लाल भारतीय इसे 'विश्वधर्म कोश' की संज्ञा देते हैं। कहते हैं कि संयुक्त राज्य अमेरिका में कभी एक ऐसे मन्दिर के निर्माण की योजना बनाई गई थी, जिसमें विश्व भर के प्रायः सभी प्रमुख मतों एवं उनकी शिक्षाओं का एक ही स्थल पर संग्रह करने की योजना बनी थी। दुर्भाग्य से वह मन्दिर नहीं बन पाया किन्तु आर्य समाज के यशस्वी संस्थापक देव दयानन्द को यह गौरव प्राप्त है कि उसने सत्यार्थ प्रकाश के रूप में एक ऐसे अनुपम ज्ञान-मन्दिर का निर्माण कर दिखाया कि जिसमें संसार

भर के प्रायः सभी प्रमुख मतों, सम्प्रदायों का न केवल परिचयात्मक ज्ञान ही उपलब्ध होता है, वरन् उनके गुण-दोषों का भी बोध हो जाता है। इस ग्रन्थ के महत्व का पता हमें तब चलता है कि जब हम देखते हैं कि इस ग्रन्थ में उस महर्षि ने २६० ग्रन्थों के १८८६ प्रमाण उद्धृत किये हैं। (देखें सत्यार्थ प्रकाश आन्दोलन का इतिहास पृष्ठ ११ तथा सत्यार्थ प्रकाश दर्पण, पृष्ठ १२) इतने ग्रन्थों के इतने सारे प्रमाण एक ग्रन्थ में स्यात् ही कहीं देखने सुनने को मिलें। यही इसकी अपूर्वता एवं विशेषता है। वस्तुतः यह सद्ग्रन्थ महर्षि दयानन्द का ज्ञान कोष, उसकी दार्शनिक अभिव्यक्ति तथा गहन स्वाध्याय का प्रतिफल है। मानव जीवन का कोई ऐसा पहलू नहीं जिसकी चर्चा इस ग्रन्थ में न की गई हो। श्री विद्यानन्द जी सिद्धांत शास्त्री इस ग्रन्थ के महत्व की दर्शाते हुए लिखते हैं कि “इस ग्रन्थ को यदि हम सूत्र कहें तो कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी। क्योंकि सूत्र उसे कहते हैं जो बहुत को थोड़े में बतला दें।” (सत्यार्थ प्रकाश दर्पण, पृष्ठ ८३) वस्तुतः यह ग्रन्थ मानव कल्याण के सूत्रों से भरा पड़ा है।

रूढ़ियों, अन्धविश्वासों, कुरीतियों, कुप्रथाओं आदि से भारत-वासियों को ही नहीं विश्वमानवता को बचाने में इस पवित्र ग्रन्थ की जो भूमिका रही है, वैसी संसार भर के किसी भी अन्य ग्रन्थ की नहीं मिलती। तभी पूज्य स्वामी सत्य प्रकाश जी ने लिखा है कि “महर्षि दयानन्द सरस्वती का अमर ग्रन्थ सत्यार्थ प्रकाश भारत को ही नहीं, मानव-मात्र को प्रत्येक युग में नयी प्रेरणायें देता रहेगा। रूढ़ियों और अन्धविश्वासों से बचने के लिये यह विश्व साहित्य की अद्वितीय रचना है, और सद्बिचार और मानव कल्याण का पोषक एकमात्र ग्रन्थ है।” (भूमिका सत्यार्थ प्रकाश

क्यों पढ़ें ?) स्वामी श्रद्धानन्द जी तो इस ग्रन्थ को स्मृतियों में गिनते हैं। (देखें आदिम सत्यार्थ प्रकाश और आर्यसमाज के सिद्धांत (पृष्ठ ४६ एवं ५३) ।

अमर साहित्य —

सत्यार्थ प्रकाश इसलिए महत्वपूर्ण ग्रन्थ है कि यह अमर साहित्य को कोटि में आता है। विद्वानों की ऐसी मान्यता है कि जिस ग्रन्थ की उसके लेखक के देहान्त के बीस वर्ष पश्चात् भी मांग बनी रहे, वह अमर साहित्य कहलाता है। सत्यार्थ प्रकाश ऐसा अमर ग्रन्थ है कि जिसकी मांग उसके लेखक की मृत्यु के लगभग एक शताब्दी बाद भी वैसी ही बनी हुई है जैसी कि लेखक के सामने थी।

दूसरी यह कि इस ग्रन्थ में जो शाश्वत सत्य सनातन सिद्धांत प्रतिपादित किये गये हैं, वे ऐसे हैं कि जिन पर काल का कोई प्रभाव नहीं पड़ सकता। अतः इस दृष्टि से भी यह ग्रंथ अमर साहित्य की कोटि में आता है। महर्षि दयानन्द का नाम इतिहास में अमर है, उनकी संस्था आर्य समाज का नाम अमर है तो फिर उनके पवित्र ग्रन्थ सत्यार्थ प्रकाश का नाम अमर क्यों नहीं होगा ?

तीसरे यह कि इस ग्रन्थ को मिटाने के लिये कई योजनाबद्ध प्रहार विपक्षियों द्वारा किये गये। इस पर कितने ही आक्रमण किए गये, किन्तु यह ग्रन्थ उन सब आक्रमणों का सामना करते हुए अपनी विजय-दुंदुभि बजा रहा है, इस दृष्टि से भी यह एक अमर ग्रन्थ है।

स्वराज्य का प्रथम उद्घोषक—

सत्यार्थ प्रकाश इसलिये भी अत्यन्त महत्वपूर्ण ग्रन्थ है कि इसमें ही सर्वप्रथम स्वराज्य का उद्घोष हुआ है। “कोई कितना ही करे परन्तु जो स्वदेशीय राज्य होता है, वह सर्वोपरि उत्तम

होता है। अथवा मतमतान्तर के आग्रहरोहित, अपने पराये का पक्षपातशून्य प्रजा पर पिता माता के समान कृपा, न्याय और दया के साथ विदेशियों का राज्य भी पूर्ण सुखदायक नहीं है।” (अष्टम समुल्लास) इस पर डा० भक्तराम शर्मा लिखते हैं—“उन्होंने उस समय अपने ग्रन्थों में स्थान-स्थान पर स्वराज्य, साम्राज्य और चक्रवर्ती राज्य की चर्चा की थी जबकि राष्ट्रीय शब्दकोष में ‘स्वराज्य’ शब्द का अभी समावेश भी न हुआ था।” दादा भाई नोरोजी ने ‘स्वराज्य’ शब्द सत्यार्थ प्रकाश से ही लिया था। वीर सावरकर ठीक ही लिखते हैं “यदि आर्य समाज के संस्थापक ऋषि दयानन्द सत्यार्थ प्रकाश में स्वराज्य शब्द न लिखते तो आज स्वराज्य की पुकार न सुनाई देती।” राम प्रसाद विस्मिल अपनी आत्म कथा में इस बात को स्वीकारते हैं कि स्वराज्य आन्दोलन में कूदने की प्रेरणा उन्हें इसी पवित्र ग्रंथ से मिली थी। स्वदेशी की भावना को भारतीयों के हृदयों में वपन करने का स्तुत्य प्रयास भी सत्यार्थ प्रकाश द्वारा ही सम्भव हो सका है। एकादश समुल्लास में अंग्रेजों द्वारा इस देश के बने जूतों को कचहरी, कार्यालय आदि में न जाने देने की बात पर श्रीयुत सत्यदेव विद्यालंकार ठीक ही लिखते हैं कि “जिस व्यक्ति के हृदय में अपने देश के बने जूते के लिए इतना मान-सम्मान हो कि वह उसका विदेशी जूते के मुकाबिले में कचहरी या दफ्तर में न जाने देने तक का अपमान सहन न कर सकता हो, उसके हृदय में समाई स्वदेशी की भावना का अनुमान सहज में किया जा सकता है?” (राष्ट्रवादो दयानन्द, पृष्ठ ३०) वस्तुतः भारतीयों में स्वदेश प्रेम को जगाने तथा स्वदेशी का प्रचार करने में इस ग्रन्थ की अपूर्व भूमिका रही है।

सत्यार्थ प्रकाश में न केवल स्वराज्य, स्वदेशी आदि की भावना को उजागर किया गया है अपितु इसमें परतन्त्रता के

कारणों की भी यथोचित समीक्षा की है । यथा—“विदेशियों के आर्यावर्त में राज्य होने का कारण आपस की फूट, मतभेद, ब्रह्मचर्य का सेवन न करना, विद्या न पढ़ना-पढ़ाना आदि कुकर्म हैं । जब आपस में भाई-भाई से लड़ते हैं तभी तोमरा विदेशी आकर पंच वन बैठता है ।” (दशम समुल्लास) भारतवासियों की इस फूट के कारण हुई दुर्दशा का अत्यन्त मार्मिक चित्रण भी इस ग्रंथ में इन शब्दों में किया गया है —“चौका लगाते लगाते विरोध करते कराते सब स्वातंत्र्य, आनन्द, धन, राज्य, विद्या और पुरुषार्थ पर चौका लगाकर हाथ पर हाथ धरे बैठे हैं ।” (दशम समुल्लास) वस्तुतः देश की परतंत्रता एवं परस्पर फूट आदि पर जो चिन्ता इस ग्रंथ में व्यक्त हुई है, वह अन्य किसी में नहीं मिलती ।

समग्र क्रांति का अग्रदूत—

सत्यार्थ प्रकाश इसलिए भी अत्यन्त महत्वपूर्ण ग्रंथ है कि यही सर्वप्रथम समग्र क्रांति का अग्रदूत बन पाया । आज प्रायः क्रांति शब्द से तात्पर्य रक्तपात, उत्थल-पुत्थल एवं सामाजिक और राजनीतिक उलट-फेर तथा अव्यवस्था से ही लिया जाता है । किन्तु हमारा तात्पर्य इन सबसे कुछ भी नहीं । क्योंकि जैसा कि दादा धर्माधिकारी की मान्यता है “क्रांति में महत्व समाजिक परिवर्तन का है न कि संघर्ष एवं रक्तपात का ।” श्रीयुत अशोक विद्यालंकार ठीक ही लिखते हैं कि “क्रांति का अभिप्राय नारे लगाना, धरने देना, अनशन करना, वसें जलाना अथवा किसी शासक को पदच्युत करना नहीं है । क्रांति का अर्थ होता है संक्रमण-परिवर्तन, एक स्थिति से दूसरी स्थिति में संक्रमण ।” (सम्पादकीय स प्र. शताब्दी समारोह, स्मारिका दिल्ली, मार्च १९७६)

सत्य तो यह है कि गली सड़ी अवैज्ञानिक मान्यताओं तथा रूढ़िवादी निरर्थक परम्पराओं तथा कुप्रथाओं में एकदम परिवर्तन ला देने का नाम ही क्रान्ति है। श्री रामधारी सिंह दिनकर के अनुसार “परिवर्तन जब धीरे-धीरे आता है तो उसे सुधार कहते हैं, किन्तु वही जब तीव्र गति से पहुंच जाता है तो उसे क्रांति कहते हैं। दयानन्द के समकालीन अन्य सुधारक, सुधारक मात्र थे, किन्तु दयानन्द क्रान्ति के वेग से आये।” अतः सिद्ध है कि तीव्र परिवर्तन का नाम ही क्रान्ति है। क्रान्ति का प्रथम लक्ष्य विचारों में तीव्रतर परिवर्तन ला देना होता है। अतः वैचारिक क्रान्ति ही सभी क्रान्तियों का प्रमुख आधार होती है। जब व्यक्ति अपनी विचारधारा बदलने को बाध्य हो जाय तो उसे क्रांति ही कहा जायेगा। समग्र क्रांति से तात्पर्य सर्वतोमुखी क्रांति से ही है। अर्थात् वह क्रांति जो मानव जीवन के प्रत्येक पहलू से सम्बन्धित हो। सुप्रसिद्ध उपन्यासकार वैद्य गुरुदत्त ठीक ही लिखते हैं—“देश में कई नेता हुए हैं और हो रहे हैं, जो समाज में समग्र क्रान्ति उत्पन्न करने का प्रयास करते रहे हैं अथवा कर रहे हैं। यह निर्विवाद रूप में कहा जा सकता है कि वे न तो समग्र क्रांति के अर्थ जानते हैं, न ही उनके प्रचार समग्र क्रांति लाने में सक्षम हैं। यह श्रेय एक मात्र सत्यार्थ प्रकाश को ही दिया जा सकता है। तनिक विचार करें कि जब यह पुस्तक लिखी गई थी, तब भारत देश की अथवा भारतीय समाज की अवस्था क्या थी? उसकी तुलना आज की अवस्था से की जाये तो स्पष्ट हो जायेगा कि देश में समग्र क्रांति का श्री गणेश हुआ है और उसमें इस पुस्तक का सर्वश्रेष्ठ योगदान है।” (स० प्र० स्मारिका, दिल्ली, मार्च ७६ पृष्ठ १२) वस्तुतः इस शती में वैचारिक, धार्मिक, सांस्कृतिक, सामाजिक, राजनीतिक आदि दृष्टिकोणों में जो अभूतपूर्व

क्रांतिकारी परिवर्तन हुए हैं उन सब के पीछे सत्यार्थ प्रकाश में उल्लिखित भाव ही कार्य करते दिखाई देते हैं ।

मीमांसक कसौटियों पर खरा—

मीमांसकों ने किसी ग्रन्थ को परखने के लिए जो कसौटियां निर्धारित की हैं विद्वानों ने सत्यार्थ प्रकाश को उन पर कस कर इसे सर्वथा खरा पाया है । इस सम्बन्ध में पं० सत्यदेव विद्यालंकार लिखते हैं कि “लोकमान्य तिलक ने अपने महान ग्रन्थ ‘गीता रहस्य’ की समीक्षा करने और उसका अभिप्राय प्रकट करने के लिए मीमांसकों के जिस सर्वमान्य मत को स्वीकार किया है, उसी कसौटी पर सत्यार्थ प्रकाश की समीक्षा और परीक्षा करनी युक्तिसंगत होगी । वह मत यह है कि—

“उपक्रमोपसंहारौ अभ्यासोऽपूर्वता फलम् ।

अर्थवादोपपत्तिश्च लिंगं तात्पर्यनिर्णये ॥”

किसी ग्रन्थ का तात्पर्य जानने के लिए इस प्रकार सात कसौटियां नियत की गई हैं । पहली और दूसरी यह कि ग्रन्थ का प्रारम्भ और अन्त किस भावना से किया गया है । तीसरी अभ्यास अथवा पुनरुक्ति है । ग्रन्थकार ग्रन्थ में बार-बार अपने अभिप्राय को यत्न-तत्न व्यक्त करता है । चौथी अपूर्वता अर्थात् वह नवीनता है, जिससे प्रेरित होकर वह ग्रन्थ लिखता है । पांचवीं फल अर्थात् वह निष्कर्ष है, जिस पर वह अपने पाठक को पहुंचाना चाहता है । छठी अर्थवाद और सातवीं उपपत्ति है । अर्थवाद से अभिप्राय उन विषयों से है जिनका ग्रन्थ में मुख्य विषय को स्पष्ट करने के लिए गौण रूप से वर्णन किया जाता है । यदि कोई इस गौण विषयों को ही मुख्य मान लेता है, तो वह ग्रन्थकार के अभिप्राय को ठीक-ठीक न समझ कर उससे बहुत दूर चला जाता है । इस

प्रकार जिज्ञासु जिस परिणाम पर पहुंचता है और जिस विषय का तारतम्य सारे ग्रन्थ में उसको दीख पड़ता है, उसको उपपत्ति कहा गया है। ऋषि ने स्वयं भी लिखा है कि 'जो कोई इस ग्रन्थ-कर्त्ता के तात्पर्य के विरुद्ध मत से इसे देखेगा, उसको कुछ भी अभिप्राय विदित न होगा, क्योंकि वाक्यार्थ बोध में चार कारण होते हैं, आकांक्षा, योग्यता, आसक्ति और तात्पर्य। जब इन चारों बातों पर ध्यान देकर जो पुरुष ग्रन्थ को देखता है, तब उसको ग्रन्थ का अभिप्राय यथायोग्य विदित होता है। 'सत्यार्थ प्रकाश का अभिप्राय जानने के लिए इन्हीं कसौटियों को अपनाना चाहिए।' (राष्ट्रवादी दयानन्द राजधर्म विशेषांक पृष्ठ ४६)। हमें यह कहने में कोई संकोच नहीं वरन् गर्व ही है कि सत्यार्थ प्रकाश मीमांसकों की उपर्युक्त कसौटियों पर पूरा-पूरा खरा उतरता है। जो भी व्यक्ति चाहे इसकी परीक्षा अव भी करके देख सकता है।

सत्यार्थ प्रकाश की विशेषता—

इस ग्रन्थ की यह विशेषता है कि इसके लेखक ने इस ग्रन्थ के प्रारम्भ में जो सत्य और ऋत के प्रतिपादन की प्रतिज्ञा की है, उसे उसने अन्त तक निभाया है। और अन्त में पुनः यह घोषणा की है कि इस ग्रन्थ में उन्होंने सत्य और ऋत का ही प्रतिपादन किया है। ऐसी प्रतिज्ञा के साथ ग्रन्थ को आरम्भ करना और उसी प्रतिज्ञा के साथ उसे समाप्त भी करना किसी ऋषि आत्मा का ही काम हो सकता है। यह बात अन्यत्र कहीं भी देखने को नहीं मिलती। इसकी दूसरी विशेषता यह है कि इसका उदार लेखक इसकी भूमिका में सुस्पष्ट शब्दों में यह घोषणा करता है कि "इस ग्रन्थ में जो कहीं कहीं भूल चूक से अथवा शोधने तथा छापने में भूल चूक रह जाय

उसको जानने जनाने पर जैसा वह-वह सत्य होगा वैसा ही कर दिया जायेगा ।” (स.प्र. भूमिका) यह उसकी महानता है। वह यह मानकर चलता है कि मनुष्य अल्पज्ञ होने से भूल कर सकता है। किन्तु दूसरी ओर वह अपनी मान्यताओं के प्रति इतना दृढ़ आस्थावान् है कि वह यह लिख रहा है कि “जो कोई पक्षपात से अन्यथा शंका वा खण्डन-मण्डन करेगा उस पर ध्यान न दिया जायेगा। हां-जो वह मनुष्यमात्र का हितैषी होकर कुछ जनावेगा उसको सत्य समझने पर उसका मत संगृहीत होगा।” यही इस की विशेषता है।

सत्यार्थ प्रकाश की लोकप्रियता—

सत्यार्थ प्रकाश विगत शताब्दी का सर्वाधिक लोकप्रिय ग्रन्थ है। इसकी लोकप्रियता का अनुमान इसी बात से लगाया जा सकता है कि अपते मुद्रण काल में ही यह ग्रन्थ इतनी प्रसिद्धि पा चुका था कि इसकी इतनी मांग थी जिसके कारण महर्षि को यह ग्रन्थ पूर्ण मुद्रण से पूर्व हो केवल १२० पृष्ठ एक-एक रुपये में बेचने पड़े थे। (देखें हिन्दी भाषा और साहित्य को आर्य समाज की देन, पृष्ठ ७६ तथा ऋषि दयानन्द के पत्र और विज्ञापन पृष्ठ २४-२५) दूसरे संस्करण की भी वही दशा हुई। चारण नवलदान ते ३६४ पृष्ठ तक मुद्रित दस समुल्लास ठाकुर गिरधारी सिंह के लिए खरीदे थे। (देखें-वेदवाणी का सत्यार्थ प्रकाश परिशिष्टांक, नवम्बर १९६८, पृष्ठ १४) अर्ध-मुद्रित ग्रन्थ के पढ़ने की उत्सुकता ग्रन्थ की लोकप्रियता की मुंह बोलती तस्वीर है। डा० भवानी लाल भारतीय सत्यार्थ प्रकाश की लोकप्रियता का वर्णन करते हुए लिखते हैं-“सत्यार्थ प्रकाश की लोकप्रियता तथा विश्व-मानस के लिए उसकी उपयोगिता इसी बात से विदित होती है कि विगत एक शताब्दी में इस ग्रन्थ के सैकड़ों संस्करण

प्रकाशित हुए तथा लाखों प्रतियां धर्मतत्व के जिज्ञासु पाठकों के हाथों में पहुंची हैं। स्वदेश, विदेश की बीसियों भाषाओं में उसके अनुवाद हुए हैं। सत्यार्थ प्रकाश के पृथक समुल्लासों पर टीका—टिप्पणी तथा भाष्य, व्याख्यादि लेखन का कार्य भी प्रचुर मात्रा में हुआ है। संसार के सभी प्रमुख देशों के पुस्तकालयों में इस ग्रन्थ की प्रतियां विद्यमान हैं।” (विश्वधर्म कोश, पृष्ठ २३) सत्य तो यह है कि हिन्दी गद्य साहित्य को किसी भी अन्य पुस्तक ने आज तक इतना कागज नहीं खपाया जितना कि महर्षि के इस लोकमंगलकारी ग्रन्थ ने खपाया है। इसी से इसकी लोकप्रियता का अनुमान लगाया जा सकता है कि इतनी बड़ी संख्या में प्रकाशित हो चुकने के पश्चात् भी इस ग्रन्थ की मांग बराबर बनी हुई है। वह ग्रन्थ इतना लोकप्रिय हुआ कि लाखों अहिन्दी भाषी लोगों ने इसके अध्ययन के लिए हिन्दी सीखी और जो हिन्दी नहीं सीख सके उन्होंने उसे अपनी मातृभाषा में अनुदित रूप में पढ़ा।

इसकी लोकप्रियता का एक प्रमाण और भी है। वह यह कि जब कभी भी महर्षि दयानन्द और उनके द्वारा संस्थापित आर्य समाज का नाम आता है, लोग स्वतः ही उसके लोकप्रिय ग्रन्थ सत्यार्थ प्रकाश का नाम ले देते हैं। इससे बढ़कर इस ग्रन्थ की लोकप्रियता का प्रमाण और क्या हो सकता है? किसी विद्वान् का कथन है कि यदि तुम चाहते हो कि तुम्हारी मृत्यु के पश्चात् लोग तुम्हें याद रखें, तो या तो तुम कोई उल्लेखनीय कार्य कर दिखाओ या फिर कोई पठनीय पुस्तक लिख दो। महर्षि दयानन्द ने दोनों बातें पूर्ण कर दिखाईं। यद्यपि लोकेषणा जैसी कोई वस्तु उन्हें छू तक नहीं गयी थी तथापि उस महामानव ने अपने कर्तव्य की पूर्ति हेतु ही आर्य समाज की स्थापना जैसे लोककल्याणकारी

एवं उल्लेखनीय कार्य सम्पादित किया तथा लोकमंगलकारी ग्रन्थ सत्यार्थ प्रकाश की रचना की । यही कारण है कि उस का अथवा उसकी संस्था का नाम आते ही उसके ग्रन्थ का नाम लोग स्वतः ही लेने लग जाते हैं ।

सत्यार्थ प्रकाश का प्रभाव—

महर्षि दयानन्द के इस अमर ग्रन्थ के प्रभाव का मूल्यांकन करना सरल कार्य नहीं । उगते सूर्य की किरणें किस पर पड़ती हैं एवं कैसा प्रभाव डाल रही होती हैं इसका अनुमान, कौन कर सकता है ? सूर्य के उदय के साथ जहां संसार आँखें खोलता है वहां कुछ ऐसे भी तो जीव-जन्तु हैं जो उसके प्रकाश को सह नहीं सकते एवं उन्हें अपनी आँखें मूंद लेनी पड़ती हैं । सूर्य की किरणें जहाँ असंख्य पेड़ पौधों के लिए जीवन-दायिनी शक्ति लेकर आती हैं, वहां दूसरी ओर कतिपय रुढ़-मुण्ड पेड़ों के लिए काल बनकर भी तो आती हैं । इससे कौन क्या ग्रहण करता है, इसका ठीक-ठीक वर्णन करने की क्षमता किस में हो सकती है ? जैसे भौतिक सूर्य के प्रभाव का वर्णन अति दुष्कर है, वैसे ही इस ज्ञान-सूर्य के प्रभाव का वर्णन करना भी दुष्कर है । सत्यार्थ प्रकाश रूढ़ी भानु के उदय होने से प्रकाश-प्रिय लोगों के ज्ञानचक्षु खुल गये किन्तु अंध-कार-प्रिय लोगों को अपनी आँखें मूंदनी पड़ीं । उन लोगों ने इस ज्ञान-सूर्य को कोसना प्रारम्भ कर दिया । कोई-कोई तो इस पर कोचड़ ही उछालने लग गया । किन्तु जैसे सूर्य से आँख मिलाने की ताब किसी में नहीं वैसे ही इस ज्ञान-सूर्य के सम्मुख भी किसी की आँख नहीं उठ सकी । मुरादाबाद में आर्य समाज हरथला कालोनी के कर्मठ मंत्री श्रीयुत हंसराज जी ने एक प्रसिद्ध पौराणिक पण्डित श्री जगदीश शरण को जब सत्यार्थ प्रकाश को प्रति पढ़ने को दी तो उनसे वचन ले लिया कि वे इसे अवश्य ही पढ़ेंगे ।

दो-तीन मास के उपरान्त जब उन पण्डित जी ने उनका ग्रन्थ लौटाया तो श्री मन्त्री जी ने उन पण्डित जी की प्रतिक्रिया जाननी चाही। इसी बीच श्री मन्त्री जी ने वह ग्रन्थ एक अन्य पौराणिक को जो तभी किसी कार्यवश आया था, थमा दिया तो पण्डित जगदीश जी जो अपनी प्रतिक्रिया अभी व्यक्त नहीं कर पाये थे, उनसे पुस्तक छीनते हुए बोले कि मैं इन्हें नहीं पढ़ने दूंगा। जब मन्त्री जी ने कारण पूछा तो वे बोले कि मैं यह पुस्तक इसलिए नहीं पढ़ने देना चाहता कि यदि इन महाशय की अपने धर्म में आस्था साधारण रही तो निश्चय ही इस ग्रन्थ के स्वाध्याय से वह जाती रहेगी एवं ये आर्यसमाजी बन जायेंगे। और यदि यह मेरे जैसे स्वधर्म में दृढ़ आस्थावान् हुए तो जब तक सत्यार्थ प्रकाश पढ़ते रहेंगे, ये कुढ़ते ही रहेंगे। मन्त्री जी के पूछने पर कि इसमें कुढ़ने की क्या बात है पण्डित जी बोले कि महर्षि दयानन्द ने इस ग्रन्थ में पौराणिक धर्म की जो धज्जियाँ उड़ाई हैं, उनका उत्तर इनसे बन नहीं पड़ेगा, तब सिवाय कुढ़ने के ये और कर ही क्या सकते हैं !

आर्य समाज के मूर्धन्य सन्यासी श्री स्वामी वेदानन्द जी महाराज ने तो सत्यार्थ प्रकाश के प्रभाव की समीक्षा हेतु एक स्वतन्त्र ग्रन्थ तक की रचना कर डाली है, फिर इन पंक्तियों का तुच्छ लेखक इसमें कैसे सफल हो सकता है। सत्यार्थ प्रकाश के प्रभाव नामक उक्त पुस्तक की भूमिका में श्रीयुत स्वामी विज्ञानानन्द जी लिखते हैं—“सत्यार्थ प्रकाश के लिखे जाने के ठीक अस्सी वर्ष पश्चात् महर्षि के अनन्य भक्त महाविद्वान् पूज्यपाद श्री स्वामी वेदानन्द जी तीर्थ ने अपने देहावसान से कुछ दिन ही पूर्व यह ‘सत्यार्थ प्रकाश का प्रभाव’ नामक प्रबन्ध लिखा था। ‘सत्यार्थ प्रकाश का प्रभाव’ एक प्रतिवेदन है इस बात का कि गत अस्सी

वर्ष में स्वामी दयानन्द अनुमोदित ब्रह्मा से लेकर जैमुनि मुनि पर्यन्त (जिन्हें प्रबन्ध लेखक ने 'विरजानन्द मुनि पर्यन्त लिखा है) महाशय महर्षियों के मन्तव्य कहां तक सर्वत्र भूगोल में प्रवृत्त हो पाये हैं। पाठक पुस्तक पढ़कर स्वयं जान लेंगे कि सत्य किस प्रकार अपने विरोधियों को मूक बना देता है, किस तरह प्रतिद्वन्दी अनुकूल होकर सत्पथ पर आना आरम्भ करते हैं, किस भांति प्रबल प्रचार होते हुए भी निराधार ईसाई मन्तव्य ऋषि की समीक्षा की ताव न लाकर अपने आस्थावान् अनुयायियों के हृदय में भी आधार-शून्य से प्रतीत होने लगते हैं, क्यों और क्योंकर इसलामी सिद्धांत 'सत्यार्थ प्रकाश' के आलोक में नये-नये प्रकार से निर्वाचित (निरुक्त) होकर मूल प्रवर्त्तिकानुमोदित अपने रौद्र रूप को छोड़कर विज्ञानानुकूल रूप धारण कर रहे हैं। आर्य समाज उन सब विधर्मों लेखकों का आभारी है जिन्होंने 'सत्यार्थ प्रकाश' में की गई समीक्षा की सुखद छाया में उत्साहपूर्वक अनृत को त्याग कर सत्य को ढूँढने का प्रयत्न किया है और इस प्रकार भिन्न-भिन्न मतमतान्तरों में बटी हुई मानव जाति के विभिन्न समुदायों को एक दूसरे के समीप लाने का प्रयास किया है।" (प्रस्तावना, सत्यार्थ प्रकाश का प्रभाव)

सत्यार्थ प्रकाश में सत्यासत्य के निर्णय हेतु निष्पक्ष भाव से अन्य मतमतान्तरों को जो आलोचना की गई है, वह जहां सुग्री पाठकों को सत्यासत्य के निर्णय करने में सहायक होती है, वहां उन मतमतान्तरों के लिए बड़ी ही लाभदायक सिद्ध हुई हैं। वे लोग सत्यार्थ प्रकाश में की गई आलोचनाओं के कारण अपने सिद्धान्तों मन्तव्यों एवं मान्यताओं की नवीन व्याख्याएँ करने लगे हैं एवं यथासम्भव उन्हें बुद्धि-सम्मत एवं तर्क संगत बनाने

का प्रयत्न करने लगे हैं। किन्तु जैसे स्वर्ण पर मैल चढ़ जाने से उसे भट्टी में तपाकर कुन्दन बनाया जा सकता है किन्तु कोयले को कुन्दन बनते आज तक किसी ने नहीं देखा। भले ही अग्नि में पड़कर थोड़ी देर को उसकी कालिमा जाता रहे, किन्तु स्वर्ण की सी दीप्ति उसमें कभी भी न आ सकती। ठीक इसी प्रकार असत्य सिद्धांतों की व्याख्याएँ चाहे जितनी बदल-वदल कर क्यों न की जायें, असत्य, असत्य ही रहता है। उसे तो त्यागने में ही भला है। लोह पर चांदी का वर्क चढ़ा देने से मिठाई थोड़े ही बन जाती है। जो भी हो सत्यार्थ प्रकाश का अपना प्रभाव तो कार्य करेगा ही। वस्तुतः इसी की सुखद छाया में नवीन तर्कमूलक व्याख्याएँ सोची जाने लगी हैं। जैसे आकाशवाणी से उद्धोषित स्टैन्डर्ड टाइम से सभी लोग अपनी-अपनी घड़ियों की सुईयाँ मलाते हैं, एवं उनके दोष ठीक करते हैं, वैसे ही मतवादी लोग सत्यार्थ प्रकाश में उद्धोषित सत्य सनातन सिद्धांतों से अपने अपने सिद्धांतों का मिलान कर उनके दोष दूर करने में लगे हैं। ग्रन्थ सत्यार्थ प्रकाश का चमत्कारी प्रभाव इससे बढ़कर क्या हो सकता है? श्रीयुत पं० चन्द्र प्रकाश एम.ए. ठीक ही लिखते हैं कि "जिन्हें इतिहास का ज्ञान है, वे जानते हैं कि इस शताब्दी में अन्धविश्वास, पाखण्ड एवं कुरीतियों का कूड़ा-करकट जितना इस एक ग्रन्थ के अध्ययन से दूर हुआ है, उतना विश्व के किसी दूसरे ग्रन्थ से नहीं।" (हम सत्यार्थ प्रकाश क्यों पढ़ें ? पृष्ठ ७) यदि निष्पक्ष भाव से देखा जाये तो पता चलेगा कि रूढ़ियों, अन्ध-विश्वासों, कुरीतियों, कुप्रथाओं से बचाने के लिए विश्व-साहित्य की यह एक सर्वथा अनुपम तथा अद्वितीय रचना है। मानवता का पथ-प्रदर्शक यह ग्रन्थ असंख्य भूले भटके मानवों को सुपथ

दिखा चुका है। नास्तिक शिरोमणि गुरुदत्त इसी ग्रन्थ के स्वाध्याय से प्रबल आस्तिक ही नहीं, आस्तिकता के प्रबल प्रचारक बने। बाबू मुन्शी राम इसी के स्वाध्याय से प्रथम महात्मा मुन्शी राम और फिर स्वामी श्रद्धानन्द बने। स्वामी श्रद्धानन्द को इस ग्रन्थ को प्राप्त करने को उत्सुकता तथा उन पर इसके प्रभाव की एक अत्यन्त रोचक कहानी है। जो कि उन्हीं की आत्मकथा "कल्याण मार्ग के पथिक" से उद्धृत कर रहे हैं। जब स्वामी जी अपनी शंकाओं की निवृत्ति के लिए सत्यार्थ प्रकाश ग्रंथ खरीदना चाहते थे। वे लिखते हैं--"मैं सीधा बच्छो वाली के आर्य समाज मन्दिर की ओर सत्यार्थ प्रकाश खरीदने के विचार से चल दिया। विक्रय पुस्तक भण्डार बन्द था। चपरासी ने कहा कि लाला केशव राम पुस्तकाध्यक्ष के आने पर पुस्तक मिल सकेगी। मैंने उनके घर का पता लिया और दो घंटों की आवारागर्दी के पीछे उन का घर ढूँढ निकाला। केशवराम जी घर न थे। बड़े तार घर गये थे, क्योंकि वह तार बाबू (सिगनेलर) का काम करके ही आजी-विका प्राप्त करते थे। मैं तार घर का पता लगाकर वहाँ पहुँचा। उस समय वह छुट्टी में जलपान के लिए घर गये थे। मैं फिर उनके घर लौटा तो वह तार घर लौट गए थे। पूछने से पता लगा कि वह डेढ़ घन्टे में ड्यूटी से लौटेंगे। मैंने वह डेढ़ घन्टा पास की गली के अन्दर मटर गश्त में बिताया। एक सज्जन बाबू केशवराम जी के घर में जाते दिखाई दिए। मैंने उन्हें जा घेरा "महाशय जी ! मुझे सत्यार्थ प्रकाश खरीदना है।" उत्तर मिला "निवृत्त होकर कुछ खा लूँ फिर आपके साथ समाज मन्दिर चलूँगा।" मैंने अपना सारे दिन का इतिहास सुनाकर बाहर ठहरने की इच्छा प्रकट की। केशवजी का मुख सहानुभूति से चमक उठा और उन्होंने- ने कहा-"महाशय जी ! चलिए पहले आपको पुस्तक दे दूँ। जब तक आपका काम न कर लूँ इत्मीनान न होगा।" समाज

मन्दिर मैं पहुंचने पर सत्यार्थ प्रकाश मेरे हाथ में रखा गया। मैंने मूल्य दिया और इस प्रकार आह्लाद पूर्वक लौटा मानो बड़ा कोष हाथ लग गया है। मेरे साथी मुझे प्रातः काल के भोजन में सम्मिलित न देख विस्मित थे। जब मैं पहुंचा तो सायंकाल का भोजन परसा जा रहा था, खूब भूख लगी थी, भोजन रुचिपूर्वक किया। शाम को भ्रमण के लिए गया ही नहीं लैप जला, सत्यार्थ प्रकाश की भूमिका समाप्त कर प्रथम समुल्लास के स्वाध्याय में लग गया।

काया पलट—

इस ग्रन्थ के स्वाध्याय से स्वामी जी की काया कैसे पलटी इसे भी उन्हीं की भाषा में पढ़ें-वे लिखते हैं—“संवत् १९४१ का माघ मास और आदित्यवार का दिन है। नास्तिकपन के गढे से मैं निकल चुका हूं। धर्म-विषयक गहरे आन्दोलन के पश्चात् सत्यार्थ प्रकाश का पाठ दिन रात आरम्भ कर चुका हूं। अनार-कली के पास रहमत खाँ के अहाते में एक तीन कमरों वाली कोठी के बाईं ओर के कमरे में मैं प्रातः ६ बजे कुरसी पर बैठा हूं। सत्यार्थ प्रकाश का आठवां समुल्लास सामने खुला पड़ा है किन्तु मैं हाथ पर सिर रखे किसी गंभीर विचार में निमग्न हूं। इतने में कमरे का द्वार खुला और मेरे मित्र सुन्दर दास जी ने अन्दर प्रवेश किया। उनके पैर की आहट ने मुझे विचार निद्रा से जगा दिया यह सुन्दर दास जी रावलपिण्डी के राजक्रांति के आन्दोलन में फंसे वकील, लाला अमोलकराम के भाई आर्य जाति की उन्नति के दृढ़ पक्षपाती थे। सुन्दर दास भी जानते थे कि आस्तिक बनने के पश्चात् मेरा अधिक झुकाव ब्रह्मसमाज की ओर हो रहा है। उन्होंने पूछा-‘किस चिन्ता में हैं, कहिए कुछ निश्चय हुआ?’ मेरी ओर से उत्तर मिला-‘पुनर्जन्म के सिद्धान्त ने फैसला कर दिया,

आज मैं सच्चे दिल से आर्य समाज का सभासद् बन सकता हूँ।” पाठक गण ! जो मुन्शी राम महर्षि दयानन्द के साक्षात्कार से भी पूर्णतः आर्य सभासद नहीं बन पाये थे, वे उन्हीं के विचार पुञ्ज क्रांतिदूत सत्यार्थ प्रकाश के स्वाध्याय से ही आर्य सभासद बन गये। स्वामी सत्यदेव परिव्राजक लिखते हैं—“मैं अवश्य ही ईसाई हो गया होता यदि मैंने सत्यार्थ प्रकाश और स्वामी दयानन्द की जीवनी को अच्छी तरह न पढ़ा होता।”

स्वामी धर्मानन्द जी भी एक वेदान्ती साधू थे। उनकी शिष्य मण्डली ने सत्यार्थ प्रकाश की एक प्रति वेदान्त के खण्डन का उत्तर लिखने के लिए दी। कुछ दिनों के पश्चात् जब उत्तर मांगा गया तो उन्होंने निम्नलिखित पंक्ति उत्तर में लिख दी—

“सारी उम्र बीत गई साड़ी, सानूँ सज्जनां दी याद न आई।” शिष्यों ने भाव पूछा तो बोले “दयानन्द जी ने शाश्वत सत्य का प्रतिपादन किया है। संसार में ऐसा कौन है जो उसका खण्डन कर सके?” वीतराग आर्य सन्यासी स्वामी सर्वदानन्द जी भी वेदान्ती साधू थे। एक आर्य समाजी भक्त द्वारा उनके रुग्ण होने पर सेवा-सुश्रूषा करने पर वे उस पर बड़े प्रसन्न हुए। चलते समय उस व्यक्ति ने एक पुस्तक सुन्दर वस्त्र में लपेट कर स्वामी जी को दी और विनती की कि यदि आप मुझ पर तथा मेरी सेवा पर प्रसन्न हैं तो एक बार आदि से अन्त तक इस पुस्तक को अवश्य पढ़ें। स्वामी जी उस पुस्तक को पढ़ने की प्रतिज्ञा करके चल दिये। मार्ग में उस पुस्तक को देखने का विचार आया कि देखें तो सही कि यह पुस्तक कैसी है। यह सोचकर उन्होंने उस पुस्तक को निकाला वह पुस्तक थी ‘सत्यार्थ प्रकाश’ श्री स्वामी जी नवीन वेदान्ती होने के कारण हमेशा इस पुस्तक से घृणा करते थे। किन्तु प्रतिज्ञा वश उन्होंने उसे पढ़ना प्रारम्भ किया और समाप्त

न होने तक पढ़ते रहे। वस फिर क्या था नवीन वेदान्त का वह झूठा गर्व गल कर वह गया, उन्हें चारों ओर एक नया प्रकाश दृष्टिगोचर होने लगा और आप पक्के आर्य समाजी बन गये। (देखें महापुरुषों के जीवन तथा कार्य, पृष्ठ ११६) ऐसे ही अनेकों के जीवन की कायापलट इस ग्रन्थ के स्वाध्याय से हुई हैं।

सत्यार्थ प्रकाश अग्नि परीक्षाओं में—

सत्यार्थ प्रकाश का प्रभाव जहां एक ओर अनुकूल सिद्ध हुआ वहां दूसरी ओर विपक्षियों पर उसका प्रतिकूल प्रभाव भी पड़ा। सत्यार्थ प्रकाश में की गई आलोचनाओं से चिढ़ कर विपक्षियों ने इनके विरुद्ध अनर्गल मिथ्या लेख लिखने प्रारम्भ कर दिये। किन्तु सत्यार्थ प्रकाश के जागरूक प्रहरीयों ने उन सब के मुंहतोड़ उत्तर दिये और सभी मिथ्याचारियों को मुँह की खानी पड़ी। जब उन लोगों की कोई बस न चली तो खिसिया कर इसके विरुद्ध नाना षडयन्त्र रचने लगे। कहीं इस पर न्यायालयों में अभियोग चलाये गये तो कहीं इसकी जब्ती के लिए आदेश दिए गए। सर्वप्रथम सन् १९०६ ई० में पटियाला की रियासत में सत्यार्थ प्रकाश पर विद्रोह फैलाने का अभियोग चला कर ८५ आर्य पुरुषों को जेल भेज दिया गया। आर्य समाज की ओर से इस अभियोग की पैरवी स्वयं लाला मुन्शी राम जी ने की और विजय-श्री प्राप्त की। दूसरा आक्रमण प्रयाग के जिलाधीश की ओर से था। इसमें भी इसे विद्रोह की भावना जागृत करने वाला ग्रन्थ सिद्ध करने का प्रयत्न किया गया। इसमें स्वामी श्रद्धानन्द जी और लाला लाजपत राय की राजनीतिक गतिविधियों को खूब उछाला गया। किन्तु सुयोग्य न्यायाधीश ने निर्णय आर्य समाज के पक्ष में दिया और इस प्रकार यह आक्रमण भी विफल गया। सन् १९२६ में लाहौर के मुसलमानों ने इसे हिन्दू-मुस्लिम वैमनस्य फैलाने

वाली पुस्तक कह कर इसकी जब्ती का असफल यत्न किया। सब से प्रवल आक्रमण सिव की मुस्लिम लीगी सरकार की ओर से हुआ जिसका आर्य समाज ने अपनी पूरी शक्ति से खूब डट कर सामना किया। २१ तथा २२ फरवरी सन् ४४ को स्वर्गीय डा० श्यामा प्रसाद मुखर्जी की अध्यक्षता में एक विशाल आर्य सम्मेलन बुलाया गया। विशाल शोभा यात्रा एवं अपार जन समूह का अपना विशेष प्रभाव था। सिखों के नेता बाबा विचित्र सिंह तथा बाबा मिलखा सिंह आदि के अतिरिक्त सनातनधर्मी नेता गोस्वामी गणेश दत्त आदि नेताओं का पूर्ण सहयोग रहा। तत्काल दो लाख रुपये सत्यार्थ प्रकाश रक्षा निधि में एकत्रित हो गये। ७ मई सन् ४४ को सम्पूर्ण भारतवर्ष में 'सत्यार्थ प्रकाश दिवस' मनाया गया। इस अवसर पर धन एकत्र करने के साथ-साथ सत्याग्रह के लिए सत्याग्रही भरती किए गए। १२-११-४४ को सार्वदेशिक सभा ने इस प्रतिबन्ध का विरोध करने के लिए विरोध दिवस मनाया। केन्द्रीय धारा सभा में भी इस मामले को उठाने का प्रयत्न भाई परमानन्द जी ने किया। और अन्त में विजय-श्री आर्य समाज के हाथ लगी और सत्यार्थ प्रकाश आज भी अपनी विजय पताका शान से फहरा रहा है। सत्यार्थ प्रकाश पर प्रतिबन्ध का एक लाभ यह हुआ कि इसका खूब प्रचार हुआ। प्रायः सभी लोग इसे पढ़ने को उत्सुक रहते थे कि आखिर इसमें ऐसी कौन सी बात है जिसके कारण इस पर प्रतिबन्ध लगाया गया है। श्री स्वामी वेदानन्द जी ठीक ही लिखते हैं कि—“सत्यार्थ प्रकाश एक ऐसा कुन्दन है जिसे जितना अधिक प्रतिद्वन्दी अग्नि में तपाया जाता है उतना ही वह अधिक चमक उठता है।” (सत्यार्थ प्रकाश का प्रभाव, पृष्ठ १३)

स्वतन्त्र चिन्तन का श्री गणेश—

सत्यार्थ प्रकाश पर लगे प्रतिबन्ध के विरोध में आर्य समाज

ने इस ग्रन्थ का खूब प्रचार किया। और तो और महामना माल-
वीय जी ने भी इस सद्ग्रन्थ को स्वयं अपने हाथों बेचा तथा
प्रचार किया। इन सब का परिणाम यह हुआ कि जन-साधारण
में इसके स्वाध्याय की प्रवृत्ति जग उठी। लोग इसे पढ़ते गये और
उनकी काया पलटती गई। इस ग्रन्थ ने लोगों को स्वतन्त्र चिन्तन
की राह दिखाई और स्वतन्त्र चिन्तन ने धर्म में बुद्धिवाद को
प्रवेश दिया। स्वतन्त्र चिन्तन के कारण ही हिन्दू जाति रूढ़िवा-
दिता की लीक को तोड़ने में सफल हो सकी। सत्यार्थ प्रकाश में
महर्षि दयानन्द ने बुद्धिवाद की अद्भुत मशाल जलाई थी जिसके
सम्बन्ध में कविवर दिनकर को भी यह तथ्य स्वीकारना पड़ा कि
“दयानन्द ने जो बुद्धिवाद की मशाल जलाई थी, उसका कोई
जवाब नहीं था।” सत्य तो यह है कि आज जो अविश्वसनीय
तथ्यों एवं घटनाओं, चरित्रों एवं भावनाओं को विश्वसनीय या
बुद्धिसंगत धरातल पर उतारने के प्रयत्न हो रहे हैं, वे सत्यार्थ
प्रकाश-प्रदत्त स्वतन्त्र चिन्तन की भावनाओं का ही सुफल हैं।
सत्यार्थ प्रकाश की रचना के बाद ही राम-कृष्ण आदि अवतारों
का मानवीकरण तथा उनसे सम्बद्ध प्रायः सभी अलौकिक लीलाओं
को बुद्धिवादी धरातल पर उतार लाने के प्रयास सम्भव हो सके
हैं। इस सम्बन्ध में डा० द्वारिका प्रसाद सक्सेना ठीक ही लिखते
हैं—“साकेत और प्रियप्रवास के कवियों ने अपनी कथाओं के परम्प-
रागत रूपों को स्वीकार न करके आधुनिक बौद्धिक जगत के
अनुरूप उनके कुछ नवीन उद्भावना की है, जिनसे कथायें अलौ-
किक एवं अग्राह्य न रहकर पर्याप्त बुद्धिग्राह्य एवं मानव जीवन के
अनुकूल बन गयीं हैं। साथ ही जिनमें आज का बुद्धिजीवी मानव
विश्वास भी कर सकता है, नहीं तो काली नाग का नाथना,
गोवर्धन पर्वत का अंगुली पर उठाना, हनुमान का पर्वत उखाड़
लाना आदि आज तक हास्यास्पद ही बना रहता।” (प्रियप्रवास

में काव्य, संस्कृति और दर्शन पृष्ठ ३४८) पाठक वृन्द ! यह सत्यार्थ प्रकाश के स्वतन्त्र चिंतन का ही सुपरिणाम नहीं तो और क्या है ? सत्य है—

ऋषि ! तुम्हारी तेज किरणों से तिमिर-पट फट चुका है ।
आज का संसार देखे खोल कर अन्तर्नयन को । (सौमित्र)
और

ऋषिराज तेज तेरा चहुं ओर छा रहा है ।

तेरे बताये पथ पर संसार आ रहा है ॥

आये भी क्यों न ? इसके लिए इसके सुयोग्य लेखक ने घोर तपस्या जो की थी । वह ऐसा व्यक्ति था जो असत्य, पाखण्ड, अविद्या एवम् अनाचार आदि के विरुद्ध अकेले ही मोर्चा लगा कर खड़ा हो गया था । वस्तुतः—

झूठे पैगम्बरों से लड़ता रहा अकेला,

पाखण्ड के मुकाबिल अड़ता रहा अकेला ।

वेखौफ-वेखतर वो बढ़ता रहा अकेला,

हैरान पापियों को करता रहा अकेला ॥

अन्तिम निवेदन—

प्रिय पाठक वृन्द ! प्रस्तुत पुस्तक में हमने सत्यार्थ प्रकाश की एक संक्षिप्त सी झांकी प्रस्तुत करने का प्रयास किया है । इस आशय के साथ कि जनसाधारण इसके महत्व को हृदयंगम कर उसके स्वाध्याय की ओर उन्मुख हो सके । हमारा विनम्र निवेदन है कि यदि आप ने अभी तक महर्षि का यह अनूठा ग्रंथ नहीं पढ़ा तो अब अवश्य ही इसे पढ़ने की कृपा करें और यदि आप इसे पहले पढ़ चुके हैं तो भी प्रस्तुत पुस्तक के संदर्भ में उसे दोबारा पढ़ने की अनुकम्पा करें । हमारा विश्वास है कि इस अनुपम ग्रन्थ

को जितनी भी वार पढ़ा जायेगा, यह हमें सोचने के लिए कुछ न कुछ नवीन सामग्री प्रदान करता रहेगा । यदि हमारी यह पुस्तक किसी भी जिज्ञासु हृदय में महर्षि के युगान्तकारी ग्रंथ सत्यार्थ प्रकाश के अध्ययन की अभिरुचि जगा सकी तो लेखक अपने श्रम को सफल समझेगा ।

ओ३म् शम्

चाहो यदि लेना आप जग में आनन्द सच्चा,
परम पुनोत्त प्रभु — भक्ति मकरन्द का ।
चाहो तरना जो अंध-अविद्या-अगम-सिन्धु,
चाहो करना विनाश दुःख-दैन्य-फन्द का ।
चाहो भरना जो सत्य-ज्ञान से हृदय-कोष,
चाहो भण्डा फोड़ना पाखण्ड छल छन्द का ।
चाहो करना निवृत्ति शंकाओं को तो अवश्य,
पढ़ लो सत्यार्थ प्रकाश ऋषि दयानन्द का ।

(कविवर प्रकाश)

हमारे कार्यक्रम

सत्संगः—दैनिक, साप्ताहिक तथा पारिवारिक सत्संगों का आयोजन होता है।

प्रचारः—ग्राम प्रचार, मुहल्ला प्रचार तथा हरिजन वस्तियों में प्रचार की विशेष व्यवस्था है। समय समय पर कथाओं प्रवचनों तथा सम्मिलित सत्संगों का आयोजन किया जाता है। आर्य पर्वों को बड़े उत्साह से मनाया जाता है। वैदिक साहित्य का प्रकाशन तथा प्रचार प्रसार किया जाता है। विभिन्न पत्र पत्रिकाओं में लेख आदि प्रकाशित कराये जाते हैं। प्रायः सभी आर्य पत्र पत्रिकायें मंगाई जाती हैं।

सत्यार्थ प्रकाश परीक्षा का आयोजन किया जाता है।

आर्य कुमार प्रतियोगिताओं का आयोजन किया जाता है।

छात्रवृत्तियाँ—विभिन्न गुरुकुलों में अध्ययन रत मेधावी छात्र छात्राओं को छात्र वृत्तियाँ दी जाती हैं।

सेवा कार्यः—दैवी प्रकोपों के समय सेवा कार्य में सदैव आगे रहते हैं संकट ग्रस्त आर्य उपदेशक, भजनोपदेशक तथा सन्यासी महानुभावों की आर्थिक सहायता की जाती है। आगंतुक अतिथियों का पूर्ण सम्मान किया जाता है।

संस्कारों के लिए पुरोहित तथा उत्सवों के लिए उपदेशक उपलब्ध कराये जाते हैं।

वार्षिकोत्सवः—विशेष समारोह पूर्वक मनाया जाता है। विचार गोष्ठियों का आयोजन किया जाता है। जन सम्पर्क पर विशेष ध्यान दिया जाता है। सभी वर्गों से सहयोग लेने का प्रयत्न किया जाता है।

★ ओजस्वी वेद वक्ता ★

श्री स्वामी स्वरूपानन्द जी सरस्वती को आमंत्रित करें।

पताः—द्वारा आर्यसमाज, ११/२ बलकेश्वर कालोनी, आगरा-४
यशपाल आर्यबंधु

हमारे प्रकाशन—

१-मुझे आर्य समाज क्यों प्रिय है?	लेखक-श्री यशपाल आर्यव
२-विश्व को आर्य समाज की देन ।	” ” ”
३-मानव निर्माण और आर्य समाज	” ” ”
४-आर्य समाज ही क्यों?	” ” ”
५-मृत्यु और उसका भय	” ” ”
६-सुमन संचय	” ” ”
७-सत्यार्थ प्रकाश दिग्दर्शन	” ” ”
८-प्रार्थना विज्ञान	” ” ”
९-क्रांतिदूत दयानन्द	” ” ”
१०-कर्मफल प्रश्नोत्तरी	” ” ”
११-प्रभु है भी?	लेखक-साहित्याचार्य बलदेव अग्निहोत्री

हमारे आगामी प्रकाशन—

- १-आर्य समाज क्या चाहता है?
- २-दिव्य दयानन्द
- ३-भारतीय स्वतंत्रता आन्दोलन और आर्य समाज
- ४-आर्य समाज स्थापना का उद्देश्य
- ५-धर्म और विज्ञान
- ६-सदाचार सुधा
- ७-ऋषि का जादू

प्राप्ति स्थानः—आर्यसमाज रेलवे हरथला कालोनी, मुरादाबाद

आलोक प्रेस, डिण्टी गंज, मुरादाबाद